अलंकारमुक्तावली में उपमालक्षण – एक विमर्श

शिवानी
शोधछात्रा, संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

पंडित जगन्नाथोत्तरवर्ती संस्कृत मनीषियों में आचार्य विश्वेश्वर पाण्डेय का महनीय स्थान है। इन्होंने संस्कृत काव्यशास्त्र, दर्शन व व्याकरण विषय पर अनेकानेक ग्रंथों की रचना कर संस्कृत साहित्य को समृद्ध किया है। ये पदवाक्यप्रमाणज्ञ आचार्यों में सुप्रतिष्ठित हैं।[1] इनकी काव्यशास्त्र से सम्बद्ध रचनाएँ अलंकारकौस्तुभ, अलंकारप्रदीप, रसचंद्रिका, कवीन्द्रकर्णाभरण, अलंकारमुक्तावली इत्यादि है। अलंकारमुक्तावली में आचार्य मम्मट-प्रतिपादित 61 अर्थालंकारों का सोदाहरण विवेचन किया गया है।

साम्य सौन्दर्य का मूल है, जिसकी स्पष्ट प्रतीति उपमालंकार में होती है। परस्पर भिन्न दो वस्तुओं में विद्यमान सादृश्य का कथन अनेक प्रकार से किया जा सकता है, जिसके आधार पर काव्यशास्त्रियों ने सादृश्यमूलक अलंकारों के विभिन्न भेद स्वीकार किये हैं। इनमें उपमालंकार में सादृश्य का कथन अभिधा वृत्ति से किया जाता है और उसमें सादृश्य की स्फुट प्रतीति होने से आचार्यों ने उपमालंकार को ही सभी अलंकारों का मूलतत्त्व स्वीकार किया है।[2] अलंकारमुक्तावली में उपमालंकार का लक्षण उद्धृत करते हुए उसके स्वरूप को व्याख्यायित किया है - **''तत्रैकवाक्यवाच्यं सादृश्यं भिन्नयोरुपमा।''**[3] यहाँ **'तत्र'** पद का अभिप्राय गम्यसादृश्यपर्यवसायित्व अर्थात् सादृश्यमूलक अलंकारों से है।[4] लक्षण में प्रयुक्त **'एकवाक्य'** पद उपमेयोपमालंकार के लक्षण में इस लक्षण की में अतिव्याप्ति के निवारण के लिए है, जो कि उपमेयोपमालंकार से उपमा के पृथक्त्व का बोध कराता है।

उपमेयोपमालंकार में दो भिन्न वस्तुओं में परस्पर उपमान व उपमेयभाव प्रकट किया जाता है अर्थात् जो वस्तु प्रथम वाक्य में उपमेय रूप में वर्णित होती है, द्वितीय वाक्य में उसे उपमान एवं उपमान को उपमेय बना कर दोनों के सादृश्य का वर्णन किया जाता है। इस प्रकार उपमेय द्वारा उपमान के सादृश्य का वर्णन होने से इसे उपमेयोपमा कहा गया है।[5] यथा- **'चन्द्र इव मुखम्'** यहाँ एक ही वाक्य में मुखरूपी उपमेय का चन्द्ररूपी उपमान से इव पद के द्वारा सादृश्य वाच्य होने से उपमालंकार है। परन्तु यदि इसे हम **'चन्द्र इव मुखं मुखमिव चन्द्रः'** इस प्रकार कहें, तब यहाँ प्रथम वाक्य में वर्णित उपमान **'चन्द्र'** का द्वितीय वाक्य में उपमेय तथा उपमेय **'मुख'** का उपमान रूप में सादृश्यवर्णन होने से द्वितीय वाक्य में उपमेय से उपमान की तुलना होने से उपमेयोपमालंकार है। इस प्रकार उपमेयोपमा में दो ही वस्तुओं में परस्पर सादृश्य का प्रतिपादन दो वाक्यों में होता है तथा उनसे भिन्न तृतीय उपमान का सर्वथा अभाव होता है।

यदि मम्मट के अनुसार उपमा का लक्षण **'साधर्म्यमुपमा भेदे'**[6] स्वीकार कर उसका स्वरूप विवेचित किया जाये, तब उपमेयोपमालंकार में भी दो भिन्न वस्तुओं के सादृश्य का वर्णन होने से उपमालक्षण अतिव्याप्त है। इसी अभिप्राय से विश्वेश्वर पाण्डेय ने अलंकारमुक्तावली में उपमालक्षण में **'एकवाक्य'** इस पद को समाविष्ट कर उपमेयोपमालंकार से उपमा की भिन्नता दिखायी है। यदि उक्त लक्षण में 'एकवाक्य' पद का समावेश न कर **'वाच्यं सादृश्यं भिन्नयोरुपमा'** एतावन्मात्र कह कर ही उपमा के स्वरूप को व्याख्यायित किया जाता, तब यह लक्षण उपमेयोपमालंकार में भी अतिव्याप्त हो जाता। अतः **'राधेय इव किरीटी भाति किरीटीव राधेयः'**[7] उपमेयोपमा में दो वाक्यों में वर्णित सादृश्य से उपमा का भेद दर्शाने हेतु लक्षण में **'एकवाक्य'** पद प्रयुक्त किया है, जिससे उपमा का लक्षण उपमेयोपमालंकार में अतिव्याप्त नहीं होता।

उपमा के लक्षण में तृतीय पद **'वाच्यम्'** है, जिसका प्रयोजन व्यंग्योपमा का निवारण बताया है। उपमा का सामान्य अभिप्राय है- दो भिन्न वस्तुओं में उनके समान धर्मों के आधार पर साम्य स्थापित करना। उपमा अलंकार में यह साम्य अथवा सादृश्य वाच्य रहता है, जबकि सादृश्यमूलक अन्य अलंकारों यथा रूपक, दीपक, तुल्ययोगिता, उत्प्रेक्षा, स्मरण, दृष्टान्त एवं निदर्शना इत्यादि में सादृश्य वाच्य न होकर व्यंग्य होता है। इन अलंकारों में उपमान एवं उपमेय के साधारण धर्म का निर्देश रहने पर भी सादृश्य की स्पष्ट एवं अभिधा वृत्ति द्वारा प्रतीति नहीं होती। अतः उक्त अलंकारों में साधारणधर्म के आश्रय से उपमान एवं उपमेय के सादृश्य की प्रतीति व्यंजना द्वारा होती है।

उपमालंकार में उपमान एवं उपमेय में समानता की प्रतीति कराने हेतु सादृश्यवाचक इव, यथा आदि शब्दों का साक्षात् उपादान होता है जबकि रूपकादि अलंकारों में उपमान एवं उपमेय में सादृश्यवाचक पदों इवादि के शब्दशः कथित न होने से उपमान व उपमेय में विद्यमान साम्य की स्पष्टतः प्रतीति नहीं होती, अपितु उपमान व उपमेय में निहित साधारणधर्म के आधार पर होने वाली अभेदप्रतीति के द्वारा साम्य का परिज्ञान होता है। उपमालंकार का मुख्य विषय उपमान व उपमेय के सादृश्य का प्रतिपादन होता है। उपमान व उपमेय दोनों में से किसी एक के गुणोत्कर्ष अथवा गुणापकर्ष का वर्णन न कर गुणक्रियादि धर्मों के आधार पर उपमान व उपमेय में साम्य की प्रतीति कराना ही उपमालंकार का प्रयोजन है। जैसा कि काव्यप्रकाश की बालबोधिनी व्याख्या में भी स्पष्ट किया गया है - **(उपमानेन कर्त्रा उपमेयं कर्म) 'उप समीपे मीयते परिच्छिद्यते अनयेत्युपमा।**[8] अतएव सादृश्यमूलक अलंकारों से उपमालंकार के पार्थक्य को दर्शाने हेतु उपर्युक्त उपमालक्षण में **'वाच्यम्'** पद का समावेश किया है, जिससे सादृश्यमूलक अलंकारों में उपमा की प्रसक्ति नहीं होती।

लक्षण में **'भिन्नयोः'** इस पद का समावेश अनन्वयालंकार में अतिव्याप्ति के निवारण हेतु किया है। यह पद

उपमान व उपमेय के पृथक्त्व को दर्शाता है, जिसका आशय यह है कि एक ही वस्तु उपमान व उपमेय उभयरूप में नहीं हो सकती। यदि एक ही वस्तु में उपमानोपमेयभाव स्वीकार कर उनमें सादृश्य वर्णित किया जाता है, तो वहाँ अनन्वयालंकार की प्रसक्ति होगी।[9] अनन्वय पद का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ भी **'न अन्वय इति अनन्वयः'** उपमेय व उपमान में सम्बन्धाभाव को ही सूचित करता है। अनन्वयालंकार से तात्पर्य है - एक ही वस्तु में उपमानोपमेयभाव स्वीकार कर सादृश्य की वर्णना करना। जब कवि किसी वस्तु को अद्वितीय व सर्वोत्कृष्ट रूप में वर्णित करने की इच्छा से लोक में उस वस्तु के समान अन्य वस्तु का सर्वथा अभाव सूचित करते हुए प्रस्तुत वस्तु को उसी से उपमित करता है अर्थात् वर्ण्य वस्तु की उपमा देने के लिए उससे पृथक् किसी उपमान का अभाव होने पर उसी वस्तु को उपमानरूप में कल्पित कर उपमा दी जाए, तब उसे अनन्वयालंकार कहते हैं।

साहित्यदर्पणकार ने उपमालक्षण में भिन्नयोः पद के स्थान पर **'द्वयोः'** पद प्रयुक्त किया है।[10] सादृश्यविधान हेतु निश्चितरूपेण उपमान तथा उपमेय की भिन्नता आवश्यक है। उसी वस्तु का उससे सादृश्य सम्भव नहीं है। यदि हम किसी वस्तु का उसी से सादृश्य दिखायें तो यह कदापि सम्भव नहीं है, क्योंकि ऐसी स्थिति में वस्तु में विद्यमान भेद तत्त्व का लोप होने से वह वस्तु अभेद के कारण स्वयं में पूर्णतः सम्मिश्रित हो जायेगी और तब सादृश्य की प्रतीति नहीं होगी, जो कि उपमालंकार का अपरिहार्य तत्त्व है। उपमालक्षण में प्रयुक्त **'द्वयोः'** पद अनन्वयालंकार में अतिव्याप्तिवारण हेतु उचित प्रतीत नहीं होता, क्योंकि यहां एक ही उपमेयरूप वस्तु को उपमान रूप में वर्णित कर उनके साम्य का कथन किया जाता है। अतः संख्यात्मक रूप से वहाँ दो पदार्थों की उपस्थिति होने पर भी उनमें भिन्नता नहीं है। जबकि उपमालंकार में दो सर्वथा भिन्न वस्तुओं में किंचित् धर्मसाम्य के आधार पर सादृश्य का बोध कराया जाता है। इस प्रकार **'द्वयोः'** पद अनन्वयालंकार से उपमा की भिन्नता को सूचित करने में पूर्णतः समर्थ नहीं है।

इसी आशय से हेमचन्द्र व प्रतिहारेन्दुराज ने उपमान और उपमेय में सादृश्यवर्णन हेतु भिन्नता को आवश्यक मानते हुए उनकी अत्यन्त समानता का निषेध किया है।[11] अतः उनके मन में उपमालंकार में अत्यन्त साधर्म्य की अपेक्षा साम्य प्रतिपादन के लिए उपमान और उपमेय में भेद एवं अभेद दोनों का उपादान आवश्यक है। उक्तवैशिष्ट्य के आधार पर ही इसे भेदाभेदप्रधान अलंकार कहा गया है। सम्भवतः इसी कारण भामह ने उपमा से अनन्वय का भेद दर्शाने हेतु अनन्वयालंकार के लक्षण में **'असादृश्यविवक्षा'** पद का उपादान किया है।[12] इस आधार पर अनन्वयालंकार में **'पुरुष इव पुरुषः'** इस प्रकार वस्तुद्वित्व की सत्ता होने पर भी उनकी सादृश्यविवक्षा न होकर द्वितीयसदृशवस्तु का अभाव सूचित किया जाता है, अतः अनन्वय में द्वितीय सदृश वस्तु का व्यवच्छेद होता है तथा एक ही वस्तु उपमान एवं उपमेय उभयरूप में वर्णित होती है, जबकि उपमा में दोनों (उपमान व उपमेय) की पृथक्

सत्ता होती है तथा उनके किंचित् सामान्य धर्मों के आधार पर दोनों में सादृश्य के बोध द्वारा साम्य की स्थापना की जाती है।

उपमान व उपमेय दोनों में कतिपय धर्मों की समानता होने पध्र भी उनके अपने विशिष्ट गुणों की भी विद्यमानता रहती है, जिससे उपमान व उपमेय की भिन्नता का बोध होता है। यह भिन्नता सादृश्यज्ञान हेतु अतीव आवश्यक है। इसके अभाव में सादृश्यकथन (उपमान व उपमेय का) नहीं हो सकता क्योंकि किन्हीं भी वस्तुओं के धर्म में पूर्णसाम्य नहीं होता। पूर्णसाम्य के होने पर वस्तुएँ परस्पर तत्स्वरूप हो जाती हैं, सदृश नहीं। आचार्य रुय्यक ने सादृश्य को परिभाषित करते हुए कहा है, कि सादृश्य में वस्तुओं के सामान्य धर्मों के साथ ही विशिष्ट धर्म भी विद्यमान रहते हैं।[13] यद्यपि सामान्य रूप से सादृश्य व साधर्म्य दोनों पदों का प्रयोग समानता के अर्थ में ही किया जाता है, तथापि सूक्ष्मरूप से विश्लेषण करने पर इनके अर्थ में पर्याप्त भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। साधर्म्य से अभिप्राय उपमान एवं उपमेय के सम्बन्ध-विशेष से है। दो भिन्न वस्तुओं में विद्यमान गुणक्रियादि साधारण धर्मों के ज्ञान से उनके परस्पर सम्बन्ध का ज्ञान साधर्म्य है।

साधर्म्य को परिभाषित करते हुए स्पष्ट किया है- उपमान एवं उपमेय में गुण अथवा क्रियादि धर्मों के समान होने से वे सधर्म कहे जाते हैं तथा उनमें निहित धर्मों की समानता ही साधर्म्य है।[14] जैसे **'चन्द्रमिव सुन्दरं मुखम्'** में आह्लादकत्व, कान्ति इन साधारण धर्मों के आधार पर उपमेय मुख एवं उपमान चन्द्र के साम्य का बोध ही साधर्म्य है। अत एव किन्हीं दो वस्तुओं में धर्मों की समानता के आधार पर ज्ञात होने वाला सम्बन्ध विशेष ही साधर्म्य है। लक्षण में प्रयुक्त 'सादृश्यम्' पद भी विवेच्य है। साधर्म्य की अपेक्षा सादृश्य का क्षेत्र किंचित् विस्तृत है। सादृश्य में हमें वस्तुओं के साधारणधर्मों के साथ-साथ उनके विशिष्ट धर्मों का भी ज्ञान होता है तथा उनमें वस्तुओं का समग्र स्वरूप दृष्टिगत होता है।

सादृश्य शब्द की व्युत्पत्ति है **'समाना दृक् प्रतीतिः ययोः (उपमानोपमेयरूपपदार्थयोः) तौ सदृशौ, तयोर्भावः सादृश्यम् इति।**[15] सादृश्य में हमें वस्तुओं के भेद व अभेद की समान प्रतीति होती है, अतः साधर्म्य में उपमान व उपमेय के साधारणधर्म मात्र का ही ज्ञान होता है, जबकि सादृश्य में साधारण धर्म के अतिरिक्त उपमानोपमेयनिष्ठ अन्य धर्मों का भी परिज्ञान होता है एवं उससे उपमान व उपमेय के सम्बन्ध का यथोचित ज्ञान होता है। सादृश्य शब्दोपादानपूर्वक उपमालक्षण प्रतिपादित करने का एक प्रयोजन यह भी है, कि उपमा से भिन्न अन्य सादृश्यमूलक अलंकारों में साधर्म्य के विद्यमान होने पर भी सादृश्य की प्रतीति न होकर भेदाभेद इत्यादि अन्य सम्बन्धों का भी सुस्पष्ट बोध होता है।

अतः अलंकारमुक्तावली का उपमालक्षण अतिसरल, स्पष्ट व संक्षिप्त है एवं लक्षण में प्रयुक्त प्रत्येक पद सारगर्भित है, जो उपमालंकार का यथार्थस्वरूप उपस्थापित करते हुए अन्य अलंकारों से उसके वैशिष्ट्य व पार्थक्य को भी समुचित रूप से दर्शाता है।

1 श्रीमत्पदवाक्यप्रमाणपारावारविद्वद्-धुरंधर श्रीविश्वेश्वरकृतौ .....।। कवीन्द्रकर्णाभरण पृ० 4

2 अलंकारशिरोरत्नं सर्वस्वं काव्यसंपदाम् । उपमा कविवंशस्य मातैवेति मतिर्मम ।। अलंकारशेखर पृ० 34

3 अलंकारमुक्तावली पृ० 1

4 वही

5 विपर्यास उपमेयोपमा तयोः। काव्यप्रकाश पृ० 231

6 साधर्म्यमुपमा भेदे । पृ० 219

7 अलंकारमुक्तावली पृ०12

8 काव्यप्रकाश बालबोधिनी पृ० 544-545

9 उपमनोपमेयत्वे एकस्यैवैकवाक्यगे । अनन्वयः । । काव्यप्रकाश पृ० 231

10 साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः। साहित्यदर्पण पृ० 292

11 क. साधर्म्यं च देशादिभिर्भिन्नानां गुणक्रियादिसाधारणधर्मवत्त्वम्। अभेदे ह्येकत्वमेव स्यात् । ..... । काव्यानुशासन पृ० 39

ख. उपमानोपमेयभावश्च नात्यन्तं साधर्म्यणोपादाने सति भवति.....। काव्यालंकारसारसंग्रह वृत्ति पृ० 282-283

12 यत्र तेनैव तस्य स्यादुपमानोपमेयता । असादृश्यविवक्षातस्तमाहुरनन्वयम् ।। भामह काव्यालंकार 3/45

13 यत्र किंचित् सामान्यं कश्चिच्चविशेषः स विषयः सदृशतायाः। अलंकारसर्वस्व पृ० 40

14 समानः एकः तुल्यो वा धर्मो गुणक्रियादिरूपयोः ययोः (अर्थादुपमानोपमेययोः) तौ सधर्माणौ, तयोर्भावः साधर्म्यम् । काव्यप्रकाश बालबोधिनी पृ० 540

15 बृहद् अलंकारमीमांसा पृ० 243